रूसी कहानी

मैक्सिम गोर्की

कोलुशा

कोलुशा (रूसी कहानी) : मैक्सिम गोर्की

कोलुशा (रूसी कहानी) : मैक्सिम गोर्की

Kolusha (Russian Story) : Maxim Gorky

कब्रिस्तान के मुफ़लिसों के घेरे में पत्तियों से ढकी और बारिश तथा हवा में ढेर बनी समाधियों के बीच एक सूती पोशाक पहने और सिर पर काला दुशाला डाले, दो सूखे भुर्ज वृक्षों की छाया में एक स्त्री बैठी है। उसके सिर के सफ़ेद बालों की एक लट उसके कुम्हलाये गाल पर पड़ी है। उसके मज़बूती से बंद होठों के सिरे कुछ फूले हुए-से हैं, जिससे मुँह के दोनों ओर शोक-सूचक रेखाएँ उभर आई हैं। आँखों की उसकी पलके सूजी हुई हैं, जैसे वह ख़ूब रोई हो और कई लम्बी रातें उसकी जागते बीती हों।

मैं उससे कुछ ही फासले पर खड़ा देख रहा था, पर वह गुमसुम बैठी रही और जब मैं उसके नज़दीक पहुँच गया तब भी उसमें कोई हलचल पैदा नहीं हुईं। महज अपनी बुझी हुई आँखों को

उठाकर उसने मेरी ओर देखा और मेरे पास पहुँच जाने से जिस उत्सुकता, झिझक अथवा भावावेग की आशा की जाती थीं, उसे तनिक भी दिखाए बिना वह नीचे की ओर ताकती रही।

मैंने उसे नमस्कार किया। पूछा, "क्यों बहन, यह समाधि किसकी है ?"

"मेरे लड़के की ।" उसने बहत ही बेरुखी से जवाब दिया ।

"क्या वह बहुत बड़ा था ?"

"नहीं, बारह साल का था ।"

"उसकी मौत कब हुई ?"

"चार साल पहले ।"

स्त्री ने दीर्घ निश्वास छोड़ी और अपने बालों की लट को दुशाले के नीचे कर लिया। उस दिन बड़ी गर्मी थी। मुर्दों की उस नगरी पर सूरज बड़ी बेरहमी से चमक रहा था। क़ब्रो पर जो थोड़ी बहुत घास उग आई थी, वह मारे गर्मी और धूल के पीली पड़ गई थी और सलीबों के बीच यत्र-तत्र धूल से भरे पेड़ ऐसे चुपचाप खड़े थे, मानो मौत ने उन्हें भी अपने सांये में ले लिया हो।

लड़के की समाधि की ओर सिर से इशारा करते हुए मैने पूछा, "उसकी मौत कैसे हुई ?"

"घोड़ो की टापों से कुचलने से ।" उसने गिने-चुने शब्दों में उत्तर दिया और समाधि को जैसे सहलाने के लिए झुर्रियों से भरा

अपना हाथ उस ओर बढ़ा दिया।

"ऐसा कैसे हुआ?"

जानता था कि मैं अभद्रता दिखा रहा था, लेकिन उस स्त्री को इतना गुमसुम देखकर मेरा मन कुछ उत्तेजित और कुछ खीज से भर उठा था । मेरे अन्दर यह सनक पैदा हो गई थी कि ज़रा उसकी आँखों में आँसू देखूँ । उसकी उदासीनता में अस्वाभाविकता थी पर मुझे लगा कि वह उस ओर से बेसुध थी ।

मेरे सवाल पर उसने अपनी आँखें ऊपर उठाईं और मेरी ओर देखा । फिर सिर से पैर तक मुझ पर निगाह डालकर उसने धीरे-से आह भरी और बड़े मंद स्वर में अपनी कहानी कहनी शुरु की :

"घटना इस तरह घटी। इसके पिता गबन के मामले में डेढ़ साल के लिए जेल चले गए थे। हमारे पास जो जमा-पूंजी थीं वह इस बीच खर्च हो गई । बचत की कमाई ज्यादा तो थी नहीं । जिस समय तक मेरा आदमी जेल से छूटा हम लोग घास जलाकर खाना पकाते थे । एक माली गाड़ी भर वह बेकार घास मुझे दे गया था । उसे मैंने सुखा लिया था और जलाते समय उसमें थोड़ा बुरादा मिला लेती थी । उसमें बड़ा ही बुरा धुआँ निकलता था और खाने के स्वाद को ख़राब कर देता था।

कोलूशा स्कूल चला जाता था। वह बड़ा तेज़ लड़का था और बहुत ही किफायतशार था। स्कूल से घर लौटते समय रास्ते में जो भी लट्ठे- लकड़ी मिल जाते थे, ले आता था। वंसत के दिन

थे। बर्फ पिघल रही थी। और कोलूशा के पास पहनने को सिर्फ़ किरमिच के जूते थे। जब वह उन्हें उतारता था तो उसके पैर मारे सर्दी के लाल-सुर्ख हो जाते थे ।

"उन्हीं दिनों उन लोगों ने लड़के के पिता को जेल से रिहा कर दिया और गाड़ी में घर लाए । जेल में उसे दिल का दौरा पड़ गया था । वह बिस्तर पर पड़ा मेरी ओर ताक रहा था । उसके चेहरे पर कुटिल मुस्कराहट थी । मैंने उस पर निगाह डाली और मन-ही मन सोचा, 'तुमने मेरी यह हालत कर दी है! और अब मैं तुम्हारा पेट कैसे भरूँगी ? तुम्हें कीचड़ में पटक दूँ । हाँ, मैं ऐसा ही करना चाहूँगी ।

" लेकिन कोलूशा ने उसे देखा तो बिलख उठा । उसका चेहरा जर्द हो गया और बड़े बड़े आँसू उसके गालों पर बहने लगे । माँ, इनकी ऐसी हालत क्यों है ?' उसने पूछा । मैंने कहा, यह अपना जीवन जी चुके हैं'

"उस दिन के बाद से हमारी हालत बदतर होती गई । मैं रात दिन मेहनत करती, लेकिन अपना ख़ून सुखा करके भी बीस कोपेक से ज़्यादा न जुटा पाती और वह भी रोज़ नहीं, सिर्फ़ ख़ुशकिस्मत दिनों में । यह हालत मौत से भी गई-बीती थी और मैं अक्सर अपनी ज़िन्दगी का ख़ात्मा कर देने के बारे में सोचती थी।

"कोलूशा जब यह देखता तो बहुत परेशान होकर इधर--उधर भटकता। एक बार जब मुझे लगा कि यह सब मेरी बर्दाश्त से

बाहर है तो मैंने कहा, 'आग लगे मेरी इस जिंदगी को ! मैं मर क्यों नहीं जाती ! तुम लोगों में से भी किसी की जान क्यों नहीं निकल जाती ?' मेरा इशारा कोलूशा और और उसके पिता की ओर था ।

"उसके पिता ने सिर हिलाकर बस इतना कहा, मैं जल्दी ही चला जाऊँगा। मुझे जली-कटी मत सुनाओ। थोड़ा धीरज रक्खो।'

"लेकिन कोलूशा देर तक मेरी ओर ताकता रहा, फिर मुड़ा और घर से बाहर चला गया ।

"वह जैसे ही बाहर गया, मुझे अपने शब्दों पर अफ़सोस होने लगा, पर अब हो क्या सकता था ! तीर कमान से छूट चुका था ।

"एक घंटा भी नहीं बीता होगा कि घोड़े पर सवार एक सिपाही आया ।'क्या आप मैडम शिशीनीना हैं ?' उसने पूछा । मेरा दिल बैठने लगा । उसने आगे कहा, 'आपको अस्पताल में बुलाया गया है। सौदागर अनोखिन के घोड़ों से तुम्हारा बेटा कुचला गया है ।'

"मैं फौरन गाड़ी में अस्पताल के लिए रवाना हो गई। मुझे लग रहा था, मानो किसी ने गाड़ी की सीट पर जलते कोयले बिछा दिए हैं"। मैं अपने को कोस रही थी—अरी कम्बख्त, तूने यह क्या कर डाला !'

"आखिर हम अस्पताल पहुँचे । कोलूशा बिस्तर पर पड़ा था । उसके सारे बदन पर पट्टियाँ बँधी थीं । वह मेरी तरफ देखकर मुस्कराया ! उसके गालों पर आँसू बहने लगे ! धीमी आवाज में उसने कहा, 'माँ, मुझे माफ़ कर दो । पुलिस के आदमी ने पैसे ले लिए हैं ।'

"तुम किन पैसों की बात कर रहे हो, कोलूशा ?" मैंने पूछा।

"वह बोला, अरे, वे पैसे, जो लोगों ने और अनोखिन ने मुझे दिए थे।'

"मैने पूछा, 'उन्होंने तुम्हें पैसे क्यों दिए ?'

"उसने कहा, 'इसलिए...'

"उसने धीरे से आह भरी । उसकी आँखें तश्तरी जैसी बड़ी हो रही थीं।

'कोलूशा!' मैंने कहा, 'यह कैसे हुआ ? क्या तुमने आते हुए घोड़े नहीं देखे थे !'

"उसने साफ आवाज में कहा, 'माँ मैंने घोड़े आते देखे थे, लेकिन मैंने सोचा कि घोड़े मेरे ऊपर से निकल जाएँगे तो लोग मुझे ज़्यादा पैसे देंगे, और उन्होंने दिए भी।'

"ये उसके शब्द थे। मैं सब कुछ समझ गई, सब कुछ समझ गई कि मेरे उस फरिश्ते, मेरे लाल ने ऐसा क्यों किया; लेकिन अब तो कुछ भी नहीं किया जा सकता था ।

"अगले दिन सवेरे ही वह मर गया । आख़िरी साँस लेने तक

उसकी चेतना बनी रही और वह बार-बार कहता रहा-- 'पापा के लिए यह खरीद लेना, वह खरीद लेना और माँ अपने लिए भी, 'जैसेकि उसके सामने पैसा-ही पैसा हो। जबकि वास्तव में कुल सैंतालिस रूबल ही थे ।

"मैं अनोखिन के पास गई; लेकिन उसने मुझे कुल जमा पाँच रूबल दिए और हड़बड़ा कर उसने कहा, 'लड़के ने ख़ुद अपने को घोड़ों के बीच झोंक दिया था । बहुत-से लोगों ने देखा । इसलिए तुम किस लिए भीख माँगने आई हो ? मैं फिर कभी घर वापस नहीं गई । भैया, यह है सारी दास्तान !'

क़ब्रिस्तान में ख़ामोशी और सन्नाटा छाया था । सलीब, रोगी-जैसे पेड़, मिट्टी के ढेर और क़ब्र पर इतने दुखी भाव से गुमसुम बैठी वह स्त्री— इस सब की वज़ह से मैं मृत्यु और इन्सानी दुख के बारे में सोचने लगा ।

लेकिन आसमान साफ था और धरती पर ढलती गर्मी की वर्षा कर रहा था ।

मैंने अपनी जेब से कुछ सिक्के निकाले और उस स्त्री को ओर बढ़ा दिए, जिसे तकदीर ने मार डाला था, फिर भी वह जिये जा रही थी।

उसने सिर हिलाया और बहुत ही रुकते-रुकते कहा, "भाई, तुम अपने को क्यों हैरान करते हो ! आज के लिए मेरे पास बहुत हैं । अब मुझे ज़्यादा की ज़रूरत भी नहीं है। मैं अकेली हूँ-- दुनिया में बिलकुल अकेली।"

उसने एक लम्बी साँस ली और फिर मुँह पर वेदना से उभरी रेखाओं के बीच अपने पतले होंठ बन्द कर लिए ।